शैल कुमारी देवी एवं अन्य

बनाम

कृष्ण भगवान पाठक उर्फ़ किशुन बी. पाठक

(2008 की दीवानी अपील संख्या 4666)

28 जुलाई, 2008

[माननीय न्यायमूर्ति श्री सी.के. ठक्कर तथा माननीय न्यायमूर्ति श्री डी.के. जैन]

दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 – धारा 125 :

भरण-पोषण – पात्रता – आवेदन की तिथि से अथवा आदेश की तिथि से – अभिनिर्धारित: भरण-पोषण आदेश की तिथि से प्रदान किया जा सकता है, अथवा यदि ऐसा आदेशित किया जाए तो भरण-पोषण के आवेदन की तिथि से भी प्रदान किया जा सकता है, जैसा कि प्रकरण हो – आवेदन की तिथि से भरण-पोषण प्रदान करने हेतु स्पष्ट आदेश आवश्यक है – तथापि, न्यायालय द्वारा कोई विशेष कारण अभिलेखित किया जाना आवश्यक नहीं है – ऐसे किसी उपबंध के अभाव में दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 125 की उपधारा (1) में ऐसी कोई आवश्यकता अभिप्रेत नहीं की जा सकती।

भरण-पोषण – परिमाण – परिवार न्यायालय द्वारा पत्नी को रु. 2000/- तथा अवयस्क पुत्री को रु. 1000/- प्रति माह भरण-पोषण आवेदन की तिथि अर्थात् 21 जुलाई, 1997 से प्रदान किया गया – इस पर आपत्ति – अभिनिर्धारित: वर्ष 2001 के संशोधन से पूर्व अधिकतम सीमा रु. 500/- थी – अतः परिवार न्यायालय द्वारा 21 जुलाई, 1997 से पत्नी या अवयस्क पुत्री को प्रति माह रु. 500/- से अधिक भरण-पोषण प्रदान नहीं किया जा सकता था – अधिकतम यही किया जा सकता था कि ऐसा आदेश उस तिथि से प्रभावी किया जाता जब संशोधन अधिनियम, 2001 (जिससे धारा 125 में संशोधन किया गया) प्रवृत्त हुआ।

अंतरिम भरण-पोषण – प्रदान किया जाना – अभिनिर्धारित: किसी स्पष्ट निषेध या प्रतिषेध के अभाव में, धारा 125 की व्याख्या इस प्रकार की जा सकती है कि वह

आवश्यक निहितार्थ द्वारा भरण-पोषण हेतु दायर आवेदन के अंतिम परिणाम के अधीन अंतरिम भरण-पोषण का आदेश पारित करने की शक्ति प्रदान करती है – वर्तमान वाद में, दंडाधिकारी द्वारा अंतरिम भरण-पोषण का आदेश पारित करना उचित एवं पूर्णतः न्यायसंगत था – धारा 125 में वर्ष 2001 के संशोधन से पूर्व भी दंडाधिकारी द्वारा अंतरिम भरण-पोषण प्रदान किया जा सकता था।

अपीलकर्ता संख्या-1, प्रतिवादी की पत्नी है। दिनांक 21 जुलाई, 1997 को दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 125 के अंतर्गत भरण-पोषण का एक वाद दायर किया गया, जिसमें अपीलकर्ता संख्या-1 ने अपने लिए ₹500/- प्रति माह तथा अपनी अवयस्क पुत्री, अपीलकर्ता संख्या-2 के लिए ₹500/- प्रति माह भरण-पोषण की मांग की। अपीलकर्ता संख्या-1 का यह मामला था कि प्रतिवादी ने उसका तथा अपीलकर्ता संख्या-2 का भरण-पोषण करने में उपेक्षा की है। इसके पश्चात, अपीलकर्ताओं द्वारा न्यायालय से यह प्रार्थना करते हुए एक आवेदन दायर किया गया कि कार्यवाही लंबित रहने के दौरान 'अंतरिम' भरण-पोषण प्रदान किया जाए। विचारण न्यायालय ने उक्त आवेदन स्वीकार करते हुए प्रत्येक आवेदक के लिए ₹300/- प्रति माह की दर से अंतरिम भरण-पोषण निर्धारित किया। बाद में यह वाद परिवार न्यायालय को स्थानांतरित कर दिया गया, जिसने दिनांक 29 नवम्बर, 2006 को मामले का अंतिम निस्तारण करते हुए प्रतिवादी को निर्देश दिया कि वह अपीलकर्ता संख्या-1 को ₹2,000/- प्रति माह तथा अपीलकर्ता संख्या-2 को ₹1,000/- प्रति माह भरण-पोषण का भुगतान करे, जो कि आवेदन की तिथि अर्थात् 21 जुलाई, 1997 से देय होगा। अपीलकर्ताओं ने उच्च न्यायालय में आपराधिक पुनरीक्षण याचिका दायर की, जिसमें उच्च न्यायालय ने भरण-पोषण की राशि को घटाकर अपीलकर्ता संख्या-1 के लिए ₹2,000/- से ₹750/- तथा अपीलकर्ता संख्या-2 के लिए ₹1,000/- से ₹750/- कर दिया। उच्च न्यायालय ने यह भी निर्देश दिया कि भरण-पोषण की राशि आवेदन की तिथि अर्थात् 21 जुलाई, 1997 से नहीं, बल्कि आदेश की तिथि अर्थात् 29 नवम्बर, 2006 से देय होगी।

इस न्यायालय में अपील में निम्नलिखित प्रश्न विचारार्थ उत्पन्न हुए: 1) क्या परिवार न्यायालय ने अपीलकर्ताओं को दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 125 के अंतर्गत दायर आवेदन की तिथि से भरण-पोषण प्रदान करके त्रुटि की, तथा क्या वर्ष 2001 से पूर्व (जब उस समय प्रभावी विधिक प्रावधानों अर्थात् धारा 125 दं.प्र.सं. के अनुसार अधिकतम भरण-पोषण ₹500/- प्रति माह निर्धारित था) अपीलकर्ता संख्या-1 या अपीलकर्ता संख्या-2 को ₹500/- से अधिक भरण-पोषण प्रदान करना भी त्रुटिपूर्ण था? 2) क्या उच्च न्यायालय द्वारा भरण-पोषण की राशि में कमी करना तथा यह निर्देश देना कि भुगतान परिवार न्यायालय के आदेश की तिथि से किया जाए, न्यायोचित था? 3) क्या दंड प्रक्रिया संहिता में वर्ष 2001 के संशोधन से पूर्व 'अंतरिम' भरण-पोषण प्रदान नहीं किया जा सकता था? 4) क्या गुण-दोष के आधार पर भी परिवार न्यायालय द्वारा अभिलेख पर उपलब्ध साक्ष्यों की उपेक्षा करते हुए अपीलकर्ता संख्या-1 को यह कहते हुए भरण-पोषण प्रदान करना कि वह स्वयं का भरण-पोषण करने में असमर्थ है, न्यायसंगत नहीं था, जबकि साक्ष्य से यह स्पष्ट था कि प्रतिवादी की कुछ संपत्तियाँ अपीलकर्ता संख्या-1 के पास थीं तथा उसे अपने पिता से भी भूमि प्राप्त हुई थी?

अपील को आंशिक रूप से स्वीकार करते हुए, न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया:

1.1 मूल अधिनियम वर्ष 1973 (अर्थात् दंड प्रक्रिया संहिता, 1973) के अधीन प्रति माह रु. 500/- की जो अधिकतम सीमा निर्धारित थी, उसे हटा दिया गया है और अब संशोधित विधि के अधीन न्यायालय के लिए यह खुला है कि वह उपयुक्त समझे जाने वाला भरण-पोषण का परिमाण निर्धारित करे। भुगतान की तिथि के संबंध में कोई महत्वपूर्ण परिवर्तन नहीं हुआ है। मूल रूप से अधिनियमित उपधारा (2) के अधीन यह उपबंधित था कि भरण-पोषण का भुगतान आदेश की तिथि से किया जा सकता है अथवा यदि ऐसा आदेशित किया जाए तो आवेदन की तिथि से भी किया जा सकता है। वर्ष 2001 के संशोधन

के पश्चात भी न्यायालय द्वारा भरण-पोषण के भुगतान का आदेश या तो आदेश की तिथि से किया जा सकता है या जहाँ आवेदन की तिथि से भरण-पोषण के भुगतान का स्पष्ट आदेश पारित किया जाता है, वहाँ भरण-पोषण की राशि आवेदन की तिथि से देय होगी, अर्थात् आवेदन की तिथि से। [कंडिका 19, 20] [399-छ;400-क, ख, ग]।

1.2 वर्तमान प्रकरण में उच्च न्यायालय का यह अभिमत कि *सामान्य नियम* के रूप में दंडाधिकारी को भरण-पोषण केवल आदेश की तिथि से ही प्रदान करना चाहिए और भरण-पोषण के आवेदन की तिथि से नहीं, तथा यदि वह ऐसा आदेश पारित करना चाहता है तो उसे उसके समर्थन में कारण अभिलिखित करने आवश्यक हैं, सही नहीं है। वाद की अवधि न तो आवेदक के नियंत्रण में होती है और न ही उसके अधिकार में, अतः भरण-पोषण की पात्रता को वाद के निस्तारण की अनिश्चित तिथि पर निर्भर नहीं छोड़ा जाना चाहिए। [कंडिका 44, 45] [410-छ; 411-क, ख]।

1.3 पुनः, भरण-पोषण वह अधिकार है जो पत्नी को अपने पति के विरुद्ध उसी क्षण से प्राप्त हो जाता है जब उसका विवाह पति से होता है। यह केवल एक *नैतिक* दायित्व ही नहीं है, बल्कि पति पर अपनी पत्नी का भरण-पोषण करना एक *विधिक* कर्तव्य भी है। अतः जब भी पत्नी अपने पति के साथ निवास नहीं करती है और भरण-पोषण का दावा करती है, तब न्यायालय के समक्ष विचारणीय एकमात्र प्रश्न यह होता है कि क्या वह अपने पति से पृथक रहने के लिए न्यायोचित थी और फिर भी उससे भरण-पोषण का दावा कर सकती है, और यदि इसका उत्तर सकारात्मक है, तो वह भरण-पोषण की हकदार है। अतः दंडाधिकारी के लिए यह खुला है कि वह आवेदन की तिथि से भरण-पोषण प्रदान करे और ऐसा कोई उपबंध नहीं है जो 'विशेष कारणों' के अभिलेखन की अपेक्षा करता हो, यद्यपि उसे अपने द्वारा पारित आदेश के समर्थन में दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 354 की उपधारा (6) में परिकल्पित अनुसार कारण अभिलिखित करने होंगे। [कंडिका 46] [411-ग, घ,ङ,च]।

1.4 दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 125 के अंतर्गत आवेदन का निर्णय करते

समय दंडाधिकारी को पत्नी, संतान अथवा माता-पिता को भरण-पोषण प्रदान करने अथवा उसे अस्वीकार करने के कारण अभिलिखित करना आवश्यक है। ऐसा भरण-पोषण आदेश की तिथि से प्रदान किया जा सकता है अथवा, यदि ऐसा आदेशित किया जाए, तो भरण-पोषण के आवेदन की तिथि से भी प्रदान किया जा सकता है, जैसा कि प्रकरण हो। आवेदन की तिथि से भरण-पोषण प्रदान करने के लिए स्पष्ट आदेश आवश्यक है। तथापि, न्यायालय द्वारा कोई विशेष कारण अभिलिखित किया जाना आवश्यक नहीं है। ऐसे किसी स्पष्ट उपबंध के अभाव में दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 125 की उपधारा (1) में ऐसी कोई आवश्यकता अभिप्रेत नहीं की जा सकती। [कंडिका 47] [411-च, छ; 412-क]।

1.5 जहाँ तक 'अंतरिम' भरण-पोषण का संबंध है, यह सत्य है कि दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 125, अपने मूल रूप में, दंडाधिकारी को ऐसा आदेश पारित करने तथा अंतरिम भरण-पोषण के भुगतान का निर्देश देने हेतु स्पष्ट रूप से सशक्त नहीं करती थी। किन्तु संहिता ने दंडाधिकारी को ऐसा आदेश पारित करने से निषिद्ध भी नहीं किया था। अब, कार्यवाहियों की प्रकृति को दृष्टिगत रखते हुए, परित्यक्त एवं निराश्रित पत्नियों, उपेक्षित एवं परित्यक्त बच्चों तथा अशक्त एवं असहाय माता-पिता को राहत प्रदान करना तथा यह सुनिश्चित करना कि कोई भी पत्नी, संतान या माता-पिता समाज में भिक्षावृत्ति एवं दीनता की अवस्था में न पहुँच जाए जिससे वे अपराध करने अथवा उनके प्रति अपराध किए जाने के लिए प्रेरित हों, इस मूल उद्देश्य को ध्यान में रखते हुए दंडाधिकारी के पास ऐसा आदेश पारित करने की *'निहित शक्ति'* थी। अध्याय IX (पत्नी, संतान एवं माता-पिता के भरण-पोषण के आदेश) के अधीन दंडाधिकारी का अधिकार क्षेत्र पूर्णतः दंडात्मक प्रकृति का नहीं है। इसके अतिरिक्त, संहिता की धारा 125 द्वारा प्रदत्त उपाय एक *सारांश उपाय* है, जिसके माध्यम से सक्षम दीवानी न्यायालय द्वारा पारित डिक्री के अधीन रहते हुए युक्तियुक्त भरण-पोषण राशि सुनिश्चित की जाती है। अतः किसी स्पष्ट *निषेध* या *प्रतिषेध* के अभाव में, धारा 125 की व्याख्या इस प्रकार की जा सकती है कि वह आवश्यक निहितार्थ द्वारा आवेदन के अंतिम

परिणाम के अधीन अंतरिम भरण-पोषण का आदेश पारित करने की शक्ति प्रदान करती है। अंतरिम भरण-पोषण प्रदान करने पर किसी निषेध के अभाव में ऐसी शक्ति को संहिता की धारा 125 के कल्याणकारी प्रावधान में निहित माना जा सकता है, जिससे कार्यवाही लंबित रहने के दौरान स्वयं का भरण-पोषण करने में असमर्थ पत्नी को संरक्षण प्रदान किया जा सके। यहाँ तक कि संसद ने भी इस वास्तविकता को ध्यान में रखते हुए संशोधन अधिनियम, 2001 द्वारा इस उद्देश्य हेतु स्पष्ट उपबंध किया। वर्तमान प्रकरण में दंडाधिकारी द्वारा अंतरिम भरण-पोषण का आदेश पारित करना उचित एवं पूर्णतः न्यायोचित था। आदेश के इस भाग में कोई दोष नहीं है और दंडाधिकारी द्वारा वर्ष 2001 में धारा 125 के संशोधन से पूर्व भी अंतरिम भरण-पोषण प्रदान किया जा सकता था। [कंडिका 21, 27, 45] [400-ग, घ, ङ, च, छ; 404- घ,ङ; 411-ख, ग]।

1.6 वर्तमान प्रकरण में, परिवार न्यायालय ने अपीलकर्ता-पत्नी तथा पुत्री को क्रमशः रु. 2000/- एवं रु. 1000/- प्रति माह भरण-पोषण आवेदन की तिथि अर्थात् 21 जुलाई, 1997 से प्रदान किया। वर्ष 2001 के संशोधन से पूर्व अधिकतम सीमा रु. 500/- थी। अतः परिवार न्यायालय द्वारा अपीलकर्ता सं. 1 अथवा अपीलकर्ता सं. 2 को 21 जुलाई, 1997 से प्रति माह रु. 500/- से अधिक भरण-पोषण प्रदान नहीं किया जा सकता था। अधिकतम यह किया जा सकता था कि ऐसा आदेश उस तिथि से प्रभावी किया जाता जब संशोधन अधिनियम, 2001 प्रवृत्त हुआ। इस सीमा तक परिवार न्यायालय द्वारा पारित आदेश विधि के अनुरूप नहीं था। [कंडिका 48] [412-ख, ग, घ]।

1.7 किन्तु गुण-दोष के आधार पर भी परिवार न्यायालय द्वारा भरण-पोषण की राशि निर्धारित करना उचित नहीं था। अभिलेख पर उपलब्ध सामग्री से यह स्पष्ट है कि अपीलकर्ता सं. 1-पत्नी प्रतिवादी-पति के स्वामित्व वाले मकान में निवास कर रही है और इस प्रकार का निष्कर्ष परिवार न्यायालय द्वारा भी अभिलिखित किया गया है। यह भी साक्ष्य में है कि वह अपने कब्जे में स्थित उस भूमि से आय प्राप्त कर रही थी जो उसके पति-प्रतिवादी

की थी। यह सत्य है कि प्रतिवादी यह नहीं बता सका कि पत्नी को उस भूमि की खेती से वास्तविक रूप से कितनी आय प्राप्त होती है, किन्तु यह भी एक ऐसा प्रासंगिक एवं महत्वपूर्ण विचारणीय तत्व है जिसे भरण-पोषण की राशि निर्धारित करते समय ध्यान में रखा जाना चाहिए। इसके अतिरिक्त, अपीलकर्ता सं. 1 ने अपने पिता से कुछ भूमि भी उत्तराधिकार में प्राप्त की है। [कंडिका 49] [412-घ, ङ, च, छ]।

1.8 समस्त तथ्यों एवं परिस्थितियों के परिप्रेक्ष्य में न्याय के उद्देश्यों की पूर्ति इस प्रकार होगी कि यह अभिनिर्धारित किया जाए कि दोनों अपीलकर्ताओं को भरण-पोषण के रूप में प्रति माह रु. 1000/- प्रत्येक प्राप्त करने का अधिकार है। अपीलकर्ताओं उक्त भरण-पोषण राशि प्राप्त करने के अधिकारी होंगे उस तिथि से जब संशोधन अधिनियम, 2001 प्रवृत्त हुआ, अर्थात् 24 सितम्बर, 2001 से। जहाँ तक दंडाधिकारी द्वारा पारित 'अंतरिम' भरण-पोषण के भुगतान के आदेश का संबंध है, वह विधि के अनुरूप था और उसमें किसी प्रकार के हस्तक्षेप की आवश्यकता नहीं है। [कंडिका 50] [412-छ; 413-क]।

सावित्री बनाम गोविंद सिंह रावत, (1985) 4 एस.सी.सी. 337 – अवलंबित।

के. शिवराम बनाम के. मंगलाम्बा एवं अन्य, 1990 आपराधिक विधि पत्रिका 1880 (ए.पी.) – अनुमोदित।

मोहम्मद इनायतुल्लाह खान बनाम सलमा बानो, 1983 जब. एल.जे. 55; *रामेश्वर बनाम रामिबाई*, 1987 आपराधिक विधि पत्रिका 1952 (म.प्र.); *लच्छमानी बनाम रामू*, (1983) 1 क्राइम्स 590 (म.प्र.); *कमरुद्दीन बनाम श्रीमती राशिदा*, (1992) 1 डब्ल्यू.एल.सी. 305 (राज.); *श्यामलाल बनाम मंषा बाई*, 1998 आपराधिक विधि पत्रिका 2704 (राज.); *मोहम्मद इस्माइल बनाम बिल्कीस बानो*, 1998 आपराधिक विधि पत्रिका 2803 (इलाहाबाद); *निथा रंजन चक्रवर्ती बनाम श्रीमती कल्पना चक्रवर्ती*, 2002 आपराधिक विधि पत्रिका 4768 (कलकत्ता); *समयदीन बनाम राज्य उत्तर प्रदेश एवं अन्य*, 2001 आपराधिक विधि पत्रिका 2064 (इलाहाबाद); *विजय कापरी बनाम श्रीमती कनिष्ठा देवी एवं*

अन्य, (2000) 2 पी.एल.जे.आर. 241; *ज्ञानसेल्वी एवं अन्य बनाम इलावरासन,* (1999) 1 क्राइम्स 22 (मद्रास); *पी.एन. दुदा बनाम पी. शिव शंकर*, (1988) 3 एस.सी.सी. 167 39; *अमरजीत कौर बनाम सरताज सिंह*, 1996 आपराधिक विधि पत्रिका 4476 (पंजाब एवं हरियाणा) तथा *कृष्णा जैन बनाम धर्मराज जैन*, 1992 आपराधिक विधि पत्रिका 1028 (म.प्र.) – संदर्भित।

नज़ीर संदर्भ

(1985) 4 एस.सी.सी. 337	कंडिका 22	अवलंबित।
1983 जबलपुर लॉ जर्नल 55	कंडिका 34	में संदर्भित।
1987 आ.वि.प.1952 (मध्यप्रदेश)	कंडिका 34	में संदर्भित।
(1983) 1 अपराध 590 (मध्यप्रदेश)	कंडिका 34	में संदर्भित।
(1992) 1 डब्ल्यू.एल.सी. 305 (राजस्थान)	कंडिका 34	में संदर्भित।
1998 आ.वि.प. 2704 (राजस्थान)	कंडिका 34	में संदर्भित।
1998 आ.वि.प. 2803 (इलाहाबाद)	कंडिका 34	में संदर्भित।
2002 आ.वि.प. 4768 (कलकत्ता)	कंडिका 34	में संदर्भित।
2001 आ.वि.प. 2064 (इलाहाबाद)	कंडिका 34	में संदर्भित।
(2000) 2 पी.एल.जे.आर. 241	कंडिका 35	में संदर्भित।
(1999) 1 क्राइम्स 22 (मद्रास)	कंडिका 38	में संदर्भित।
(1988) 3 एस.सी.सी. 167	कंडिका 38	में संदर्भित।
1996 आ.वि.प. 4476(पंजाब एवं हरियाणा)	कंडिका 39	में संदर्भित।
1992 आ.वि.प. 1028 (मध्यप्रदेश)	कंडिका 40	में संदर्भित।
1990 आ.वि.प. 1880 (आंध्र प्रदेश)	कंडिका 43	में अनुमोदित।

दीवानी अपीलीय क्षेत्राधिकार : 2008 की दीवानी अपील संख्या 4666

पटना उच्च न्यायालय द्वारा आ.पु. संख्या 67 सन् 2007 में पारित दिनांक 03.05.2007 के अंतिम निर्णय एवं आदेश के विरुद्ध।

अपीलकर्ताओं की ओर से अभिनव प्रकाश एवं कन्हैया प्रियदर्शी।

उत्तरदाता की ओर से कुमार राजेश सिंह एवं निरंजना सिंह।

न्यायालय का निर्णय **माननीय न्यायमूर्ति श्री सी.के. ठक्कर** द्वारा दिया गया।

1. अनुमति प्रदान की गई।

2. वर्तमान अपील अपीलकर्ता सं. 1-पत्नी तथा अपीलकर्ता सं. 2-पुत्री द्वारा, जो कि वर्तमान वाद में प्रतिवादी कृष्ण भगवान पाठक के विरुद्ध है, दायर की गई है। अपीलकर्ताओं ने पटना उच्च न्यायालय द्वारा दिनांक 03 मई, 2007 को आ.पु.सं. 67 वर्ष 2007 में पारित निर्णय एवं आदेश से व्यथित होकर इस न्यायालय का रूख लिया है। उक्त आदेश द्वारा उच्च न्यायालय ने प्रतिवादी-पति द्वारा दायर पुनरीक्षण को आंशिक रूप से स्वीकार करते हुए, प्रधान न्यायाधीश, परिवार न्यायालय, भोजपुर द्वारा दिनांक 30 अक्टूबर, 2006 को विविध वाद सं. 280 वर्ष 1997, जो पुनः क्रमांकित होकर सं. 1 वर्ष 2005 हुआ, में पारित आदेश में संशोधन किया।

3. संक्षेप में वाद के तथ्य यह हैं कि अपीलकर्ता सं. 1 तथा प्रतिवादी के मध्य विवाह हिंदू रीति-रिवाज एवं परंपराओं के अनुसार लगभग तीन दशक पूर्व संपन्न हुआ था। उक्त वैवाहिक संबंध से नौ संतानें उत्पन्न हुईं। अपीलकर्ता सं. 2 कुमारी बबली सबसे छोटी संतान है और वही एकमात्र संतान है जो अपनी माता, अपीलकर्ता सं. 1 के साथ निवास करती है। आवेदन दायर किए जाने के समय उसकी आयु बारह वर्ष थी।

4. दिनांक 21 जुलाई, 1997 को अपीलकर्ताओं ने मुख्य न्यायिक दंडाधिकारी, भोजपुर के न्यायालय में दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 (जिसे आगे 'संहिता' कहा गया है) की धारा 125 के अंतर्गत भरण-पोषण हेतु वाद (विविध वाद सं. 280 वर्ष 1997) दायर किया,

जिसमें अपीलकर्ता सं. 1 के लिए रु. 500/- प्रति माह तथा अपीलकर्ता सं. 2 के लिए रु. 500/- प्रति माह भरण-पोषण की मांग की गई। अपीलकर्ता सं. 1 का यह कथन था कि उसके पति ने अपनी पत्नी अर्थात् अपीलकर्ता सं. 1 तथा अपनी वैध पुत्री अर्थात् अपीलकर्ता सं. 2 का भरण-पोषण करने में उपेक्षा की है। दिनांक 20 नवम्बर, 1999 को अपीलकर्ताओं द्वारा एक आवेदन दायर किया गया, जिसमें न्यायालय से प्रार्थना की गई कि कार्यवाही लंबित रहने के दौरान 'अंतरिम' भरण-पोषण प्रदान किया जाए। विद्वान मुख्य न्यायिक दंडाधिकारी ने उक्त आवेदन को स्वीकार करते हुए प्रार्थना को अनुमोदित किया तथा प्रत्येक आवेदक के लिए दिनांक 12 फरवरी, 1998 से रु. 300/- प्रति माह की दर से अंतरिम भरण-पोषण निर्धारित किया। तत्पश्चात पक्षकारों द्वारा साक्ष्य प्रस्तुत किया गया, जो दिनांक 03 सितम्बर, 2001 को समाप्त हुआ और प्रकरण अंतिम बहस हेतु स्थगित कर दिया गया। तथापि, कार्यवाही लंबित रहने के दौरान परिवार न्यायालय की स्थापना हुई और प्रकरण को प्रधान न्यायाधीश, परिवार न्यायालय, भोजपुर के समक्ष अंतरणित कर दिया गया।

5. साक्ष्य से यह स्पष्ट था कि प्रतिवादी भारतीय स्टेट बैंक, बिहटा शाखा में नकदपाल के रूप में कार्यरत था और उसे कुल वेतन रु. 18,508.98 प्राप्त हो रहा था। कटौतियों के पश्चात उसका शुद्ध वेतन रु. 9,831.76 था। प्रतिवादी जनवरी, 2006 में सेवा से सेवानिवृत्त हो गया। अपीलकर्ताओं ने दिनांक 12 सितम्बर, 2006 को एक आवेदन दायर कर प्रतिवादी को रु. 11,600/- की भरण-पोषण बकाया राशि का भुगतान करने हेतु निर्देशित करने की प्रार्थना की। परिवार न्यायालय ने दिनांक 30 अक्टूबर, 2006 को उक्त आवेदन को स्वीकार करते हुए प्रतिवादी को निर्देश दिया कि वह संपूर्ण बकाया राशि का भुगतान अगली तिथि तक एकमुश्त करे।

6. प्रकरण का अंतिम निस्तारण परिवार न्यायालय द्वारा दिनांक 29 नवम्बर, 2006 को किया गया और विद्वान प्रधान न्यायाधीश, परिवार न्यायालय ने प्रतिवादी को निर्देश दिया कि वह अपीलकर्ता सं. 1-पत्नी को रु. 2000/- प्रति माह तथा अपीलकर्ता सं. 2-

अवयस्क पुत्री को रु. 1000/- प्रति माह भरण-पोषण आवेदन की तिथि अर्थात् 21 जुलाई, 1997 से प्रदान करे, साथ ही यह भी आदेश दिया कि पूर्व में न्यायालय द्वारा पारित अंतरिम आदेश के अधीन जो राशि पहले ही भुगतान की जा चुकी है, उसे समायोजित करते हुए शेष बकाया राशि का भुगतान आदेश की तिथि से तीन माह के भीतर किया जाए।

7. अपीलकर्ता उक्त प्रधान न्यायाधीश, परिवार न्यायालय द्वारा पारित आदेश से असंतुष्ट था और उसने उच्च न्यायालय में दंड पुनरीक्षण सं. 67 वर्ष 2007 दायर किया।

8. उच्च न्यायालय ने पुनरीक्षण को आंशिक रूप से स्वीकार करते हुए परिवार न्यायालय द्वारा दिए गए निर्देश में संशोधन किया। उच्च न्यायालय ने अपीलकर्ता सं. 1-पत्नी के लिए भरण-पोषण की राशि रु. 2000/- से घटाकर रु. 750/- तथा अपीलकर्ता सं. 2-पुत्री के लिए रु. 1000/- से घटाकर रु. 750/- कर दी। उच्च न्यायालय ने यह भी निर्देश दिया कि भरण-पोषण की राशि आवेदक-अपीलकर्ताओं को आवेदन की तिथि अर्थात् 21 जुलाई, 1997 से नहीं, बल्कि आदेश की तिथि अर्थात् 29 नवम्बर, 2006 से देय होगी। उक्त आदेश को वर्तमान अपील में अपीलकर्ताओं द्वारा चुनौती दी गई है।

9. दिनांक 05 सितम्बर, 2007 को प्रकरण प्रवेश सुनवाई हेतु प्रस्तुत किया गया। विशेष अनुमति याचिका दायर करने में आठ दिन की विलंबता को क्षम्य किया गया तथा प्रतिवादी को नोटिस निर्गत किया गया। वाद की प्रकृति को दृष्टिगत रखते हुए, दिनांक 16 अप्रैल, 2008 के आदेश द्वारा रजिस्ट्री को निर्देशित किया गया कि प्रकरण को अंतिम निस्तारण हेतु गैर-विविध दिवस पर सूचीबद्ध किया जाए और इसी प्रकार यह प्रकरण हमारे समक्ष प्रस्तुत किया गया है।

10. हमने पक्षकारों की ओर से उपस्थित विद्वान अधिवक्ताओं को सुना है।

11. अपीलकर्ताओं की ओर से उपस्थित विद्वान अधिवक्ता ने यह प्रतिपादित किया कि प्रतिवादी द्वारा दायर पुनरीक्षण को आंशिक रूप से स्वीकार करते हुए तथा परिवार न्यायालय द्वारा दिए गए निर्देशों में संशोधन करते हुए उच्च न्यायालय ने त्रुटि की है। यह

प्रस्तुत किया गया कि अपीलकर्ता सं. 1-पत्नी एवं अपीलकर्ता सं. 2-पुत्री के भरण-पोषण की राशि को कम करने में उच्च न्यायालय स्पष्ट रूप से त्रुटिपूर्ण था। इसी प्रकार, उच्च न्यायालय द्वारा यह अभिमत व्यक्त करना कि अपीलकर्ताओं आवेदन की तिथि से नहीं, बल्कि न्यायालय द्वारा पारित आदेश की तिथि से ही भरण-पोषण के अधिकारी हैं, भी त्रुटिपूर्ण है। अतः यह निवेदन किया गया कि उच्च न्यायालय द्वारा पारित आदेश को अपास्त करते हुए परिवार न्यायालय के आदेश को पुनर्स्थापित किया जाए।

12. प्रतिवादी की ओर से उपस्थित विद्वान अधिवक्ता ने, इसके विपरीत, उच्च न्यायालय द्वारा पारित आदेश का समर्थन किया। यह प्रतिपादित किया गया कि परिवार न्यायालय द्वारा अपीलकर्ताओं को आवेदन की तिथि से भरण-पोषण प्रदान करना उचित नहीं था। यह भी प्रस्तुत किया गया कि वर्ष 2001 से पूर्व, जब प्रासंगिक विधिक उपबंध (संहिता की धारा 125, जैसा कि उस समय प्रवृत्त थी) प्रति माह रु. 500/- की अधिकतम सीमा की अनुमति देते थे, तब परिवार न्यायालय द्वारा अपीलकर्ता सं. 1-पत्नी अथवा अपीलकर्ता सं. 2-पुत्री को रु. 500/- से अधिक भरण-पोषण प्रदान करना भी त्रुटिपूर्ण था। अतः उच्च न्यायालय द्वारा भरण-पोषण की राशि में कटौती करना तथा भुगतान को आदेश की तिथि से प्रभावी करने का निर्देश देना उचित था। यह भी प्रतिपादित किया गया कि वर्ष 2001 में संहिता के संशोधन से पूर्व 'अंतरिम' भरण-पोषण प्रदान नहीं किया जा सकता था।

13. विद्वान अधिवक्ता ने यह भी प्रस्तुत किया कि गुण-दोष के आधार पर भी परिवार न्यायालय अभिलेख पर उपलब्ध साक्ष्य की उपेक्षा करते हुए तथा यह अभिलिखित करते हुए कि अपीलकर्ता सं. 1 स्वयं का भरण-पोषण करने में असमर्थ है, उसे भरण-पोषण प्रदान करने में न्यायोचित नहीं था। अधिवक्ता ने यह प्रस्तुत किया कि साक्ष्य से स्पष्ट है कि प्रतिवादी-पति की कुछ संपत्तियाँ अपीलकर्ता सं. 1-पत्नी के पास थीं। इसके अतिरिक्त, उसने अपने पिता से भी भूमि उत्तराधिकार में प्राप्त की है। अतः भरण-पोषण की राशि निर्धारित करते समय इन तथ्यों को परिवार न्यायालय द्वारा विचार में लिया जाना चाहिए था। इन

सभी आधारों पर यह प्रस्तुत किया गया कि संविधान के अनुच्छेद 136 के अधीन विवेकाधीन अधिकार क्षेत्र का प्रयोग करते हुए उच्च न्यायालय द्वारा पारित आदेश में किसी प्रकार के हस्तक्षेप की आवश्यकता नहीं है और अपील निरस्त किए जाने योग्य है।

14. हमारे विचारार्थ तीन प्रश्न उत्पन्न होते हैं; (क) क्या संहिता में किसी विशिष्ट एवं स्पष्ट उपबंध के अभाव में अंतरिम भरण-पोषण प्रदान किया जा सकता है; (ख) क्या आवेदिका-पत्नी एवं उसकी पुत्री भरण-पोषण के लिए परिवार न्यायालय द्वारा पारित आदेश की तिथि से अधिकारिणी हैं अथवा संहिता की धारा 125 के अंतर्गत उनके द्वारा किए गए आवेदन की तिथि से; तथा (ग) वह भरण-पोषण की राशि क्या हो सकती है जिसे न्यायालय द्वारा प्रदान किया जा सकता है।

15. इन प्रश्नों पर विचार करने से पूर्व यह उपयुक्त होगा कि हम प्रासंगिक विधिक उपबंधों का परीक्षण करें। संहिता की धारा 125 की उपधाराएँ (1) एवं (2), जैसा कि वे वर्ष 1973 में मूल रूप से अधिनियमित थीं, इस प्रकार हैं:—

> *धारा 125. पत्नी, संतान एवं माता-पिता के भरण-पोषण के लिए आदेश -*
> (1) यदि कोई व्यक्ति, जिसके पास पर्याप्त साधन हैं, भरण-पोषण करने में उपेक्षा करता है या इंकार करता है—
>
> (क) अपनी पत्नी का, जो स्वयं का भरण-पोषण करने में असमर्थ है; या
>
> (ख) अपने वैध अथवा अवैध अवयस्क संतान का, चाहे विवाहित हो या नहीं, जो स्वयं का भरण-पोषण करने में असमर्थ है; या
>
> (ग) अपने वैध अथवा अवैध संतान का (जो विवाहित पुत्री न हो), जिसने वयस्कता प्राप्त कर ली है, किन्तु जो किसी शारीरिक या मानसिक विकृति अथवा चोट के कारण स्वयं का भरण-पोषण करने में असमर्थ है; या

(घ) अपने पिता या माता का, जो स्वयं का भरण-पोषण करने में असमर्थ है,—

तो प्रथम श्रेणी का दंडाधिकारी, ऐसी उपेक्षा या इंकार का प्रमाण होने पर, ऐसे व्यक्ति को आदेश दे सकता है कि वह अपनी पत्नी या ऐसे संतान, पिता या माता के भरण-पोषण के लिए प्रति माह ऐसी राशि, *जो कुल मिलाकर पाँच सौ रुपये से अधिक न हो, जैसा कि दंडाधिकारी उचित समझे*, प्रदान करे तथा उसका भुगतान ऐसे व्यक्ति को करे जैसा कि दंडाधिकारी समय-समय पर निर्देशित करे:

परंतु यह कि दंडाधिकारी, यदि वह इस बात से संतुष्ट हो कि उक्त उपखंड (ख) में उल्लिखित अवयस्क बालिका का पति, यदि उसका विवाह हो चुका है, पर्याप्त साधनों से युक्त नहीं है, तो वह उसके पिता को यह आदेश दे सकता है कि वह ऐसी भत्ता राशि उसके वयस्क होने तक प्रदान करे।

स्पष्टीकरण.— इस अध्याय के प्रयोजनों के लिए,—

(क) "अवयस्क" से अभिप्राय ऐसे व्यक्ति से है जो भारतीय वयस्कता अधिनियम, 1875 (1875 का 9) के प्रावधानों के अधीन वयस्कता प्राप्त न करने वाला माना जाता है;

(ख) "पत्नी" में ऐसी स्त्री भी सम्मिलित है जिसे उसके पति द्वारा तलाक दिया गया हो अथवा जिसने अपने पति से तलाक प्राप्त किया हो और जिसने पुनर्विवाह न किया हो।

(2) *ऐसी भत्ता राशि आदेश की तिथि से देय होगी, अथवा यदि ऐसा आदेशित किया जाए, तो भरण-पोषण के आवेदन की तिथि से देय होगी।*

(बल दिया गया)

16. धारा 125 की उपधारा (1) के साधारण पठन से इसमें कोई संदेह नहीं रह

जाता कि यदि कोई व्यक्ति, जिसके पास पर्याप्त साधन हैं, अपनी पत्नी का, जो स्वयं का भरण-पोषण करने में असमर्थ है, अथवा अपने वैध (या अवैध) संतान का, जो स्वयं का भरण-पोषण करने में असमर्थ है, अथवा अपने पिता या माता का, जो स्वयं का भरण-पोषण करने में असमर्थ हैं, भरण-पोषण करने में उपेक्षा करता है या इंकार करता है, तो न्यायालय, ऐसी उपेक्षा या इंकार के प्रमाण पर, ऐसे व्यक्ति को उसकी पत्नी या संतान अथवा माता-पिता, जैसा कि प्रकरण हो, को भरण-पोषण देने का आदेश दे सकता है। यह भी स्पष्ट है कि अधिकतम राशि, जिसे भुगतान हेतु आदेशित किया जा सकता था, रु. 500/- प्रति माह थी, जो "कुल मिलाकर पाँच सौ रुपये से अधिक न हो" शब्दों से स्पष्ट है।

17. यह भी स्पष्ट है कि उपधारा (2) के अधीन ऐसा भरण-पोषण "आदेश की तिथि से" देय किया जा सकता है अथवा "यदि ऐसा आदेशित किया जाए, तो भरण-पोषण के आवेदन की तिथि से" देय किया जा सकता है।

18. दंड प्रक्रिया संहिता (संशोधन) अधिनियम, 2001 (अधिनियम सं. 50 वर्ष 2001) द्वारा उपधाराएँ (1) एवं (2) दिनांक 24 सितम्बर, 2001 से संशोधित की गईं। संशोधित उपधाराएँ अब इस प्रकार हैं:—

> *धारा 125. पत्नी, संतान एवं माता-पिता के भरण-पोषण के लिए आदेश* —(1) यदि कोई व्यक्ति, जिसके पास पर्याप्त साधन हैं, भरण-पोषण करने में उपेक्षा करता है या इंकार करता है—
>
> (क) अपनी पत्नी का, जो स्वयं का भरण-पोषण करने में असमर्थ है; या
>
> (ख) अपने वैध अथवा अवैध अवयस्क संतान का, चाहे विवाहित हो या नहीं, जो स्वयं का भरण-पोषण करने में असमर्थ है; या
>
> (ग) अपने वैध अथवा अवैध संतान का (जो विवाहित पुत्री न हो), जिसने वयस्कता प्राप्त कर ली है, किन्तु जो किसी शारीरिक या

मानसिक विकृति अथवा चोट के कारण स्वयं का भरण-पोषण करने में असमर्थ है; या

(घ) अपने पिता या माता का, जो स्वयं का भरण-पोषण करने में असमर्थ है,—

तो प्रथम श्रेणी का दंडाधिकारी, ऐसी उपेक्षा या इंकार का प्रमाण होने पर, ऐसे व्यक्ति को आदेश दे सकता है कि वह अपनी पत्नी या ऐसे संतान, पिता या माता के भरण-पोषण के लिए *प्रति माह ऐसी राशि प्रदान करे, जैसा कि दंडाधिकारी उचित समझे,* तथा उसका भुगतान ऐसे व्यक्ति को करे जैसा कि दंडाधिकारी समय-समय पर निर्देशित करे:

परंतु यह कि दंडाधिकारी, यदि वह इस बात से संतुष्ट हो कि उपखंड (ख) में उल्लिखित अवयस्क बालिका का पति, यदि उसका विवाह हो चुका है, पर्याप्त साधनों से युक्त नहीं है, तो वह उसके पिता को यह आदेश दे सकता है कि वह ऐसी भत्ता राशि उसके वयस्क होने तक प्रदान करे।

परंतु यह भी कि दंडाधिकारी, इस उपधारा के अधीन भरण-पोषण हेतु मासिक भत्ता से संबंधित कार्यवाही के लंबित रहने के दौरान, ऐसे व्यक्ति को यह आदेश दे सकता है कि वह अपनी पत्नी या ऐसे संतान, पिता या माता के अंतरिम भरण-पोषण तथा कार्यवाही के व्यय के लिए, जिसे दंडाधिकारी युक्तियुक्त समझे, प्रति माह भत्ता प्रदान करे तथा उसका भुगतान ऐसे व्यक्ति को करे जैसा कि दंडाधिकारी समय-समय पर निर्देशित करे:

परंतु यह भी कि अंतरिम भरण-पोषण तथा कार्यवाही व्यय के लिए मासिक भत्ता हेतु, द्वितीय उपबंध के अधीन दायर आवेदन का, यथासंभव,

ऐसे व्यक्ति को आवेदन की सूचना की तामील की तिथि से साठ दिनों के भीतर निस्तारण किया जाएगा।

स्पष्टीकरण.— इस अध्याय के प्रयोजनों के लिए,—

(क) "अवयस्क" से अभिप्राय ऐसे व्यक्ति से है जो भारतीय वयस्कता अधिनियम, 1875 (1875 का 9) के प्रावधानों के अधीन वयस्कता प्राप्त न करने वाला माना जाता है;

(ख) "पत्नी" में ऐसी स्त्री भी सम्मिलित है जिसे उसके पति द्वारा तलाक दिया गया हो अथवा जिसने अपने पति से तलाक प्राप्त किया हो और जिसने पुनर्विवाह न किया हो।

(2) *ऐसा कोई भत्ता, जो भरण-पोषण या अंतरिम भरण-पोषण तथा कार्यवाही व्यय के लिए हो, आदेश की तिथि से देय होगा अथवा, यदि ऐसा आदेशित किया जाए, तो भरण-पोषण या अंतरिम भरण-पोषण तथा कार्यवाही व्यय के आवेदन की तिथि से देय होगा, जैसा कि प्रकरण हो।*

(बल दिया गया)

19. यह स्पष्ट है कि वर्ष 1973 के मूल अधिनियम के अधीन प्रति माह रु. 500/- की जो अधिकतम सीमा निर्धारित थी, उसे समाप्त कर दिया गया है और अब संशोधित विधि के अधीन न्यायालय के लिए यह खुला है कि वह अपनी विवेकानुसार उपयुक्त भरण-पोषण की राशि निर्धारित करे।

20. पुनः, भुगतान की तिथि के संबंध में कोई महत्वपूर्ण परिवर्तन नहीं हुआ है। मूल रूप से अधिनियमित उपधारा (2) के अधीन यह उपबंधित था कि भरण-पोषण का भुगतान आदेश की तिथि से किया जा सकता है अथवा यदि ऐसा आदेशित किया जाए तो आवेदन की तिथि से भी किया जा सकता है। वर्ष 2001 के संशोधन के पश्चात भी न्यायालय द्वारा भरण-पोषण के भुगतान का आदेश या तो आदेश की तिथि से किया जा सकता है या

जहाँ आवेदन की तिथि से भरण-पोषण के भुगतान का स्पष्ट आदेश पारित किया जाता है, वहाँ भरण-पोषण की राशि आवेदन की तिथि से देय होगी, अर्थात् आवेदन की तिथि से।

21. जहाँ तक 'अंतरिम' भरण-पोषण का संबंध है, यह सत्य है कि संहिता की धारा 125, अपने मूल रूप में, दंडाधिकारी को ऐसा आदेश पारित करने तथा अंतरिम भरण-पोषण के भुगतान का निर्देश देने हेतु स्पष्ट रूप से सशक्त नहीं करती थी। किन्तु संहिता ने दंडाधिकारी को ऐसा आदेश पारित करने से निषिद्ध भी नहीं किया था। अब, कार्यवाहियों की प्रकृति को दृष्टिगत रखते हुए, परित्यक्त एवं निराश्रित पत्नियों, उपेक्षित एवं परित्यक्त बच्चों तथा अशक्त एवं असहाय माता-पिता को राहत प्रदान करना तथा यह सुनिश्चित करना कि कोई भी पत्नी, संतान या माता-पिता समाज में भिक्षावृत्ति एवं दीनता की अवस्था में न पहुँच जाए जिससे वे अपराध करने अथवा उनके प्रति अपराध किए जाने के लिए प्रेरित हों, इस उद्देश्य को ध्यान में रखते हुए यह अभिनिर्धारित किया गया कि दंडाधिकारी के पास ऐसा आदेश पारित करने की *'निहित शक्ति'* थी। अध्याय IX (पत्नी, संतान एवं माता-पिता के भरण-पोषण के आदेश) के अधीन दंडाधिकारी का अधिकार क्षेत्र पूर्णतः दंडात्मक प्रकृति का नहीं है। इसके अतिरिक्त, संहिता की धारा 125 द्वारा प्रदत्त उपाय एक *सारांश उपाय* है, जिसके माध्यम से सक्षम दीवानी न्यायालय द्वारा पारित डिक्री के अधीन रहते हुए युक्तियुक्त भरण-पोषण राशि सुनिश्चित की जाती है। अतः किसी स्पष्ट *निषेध* या *प्रतिषेध* के अभाव में, धारा 125 की व्याख्या इस प्रकार की जा सकती है कि वह आवश्यक निहितार्थ द्वारा आवेदन के अंतिम परिणाम के अधीन अंतरिम भरण-पोषण का आदेश पारित करने की शक्ति प्रदान करती है।

22. इस न्यायालय के समक्ष *सावित्री बनाम गोविंद सिंह रावत,* (1985) 4 एस.सी.सी. 337 : 1986 आपराधिक विधि पत्रिका 41 में इस संबंध में प्रत्यक्ष प्रश्न विचारार्थ आया था। न्यायालय ने यह विचार किया कि यद्यपि अंतरिम भरण-पोषण प्रदान करने हेतु कोई विशिष्ट उपबंध नहीं था, तथापि प्रावधान के अंतर्निहित उद्देश्य तथा विधि के सामाजिक

प्रयोजन को दृष्टिगत रखते हुए ऐसी शक्ति न्यायालय को प्रदान की जानी चाहिए।

23. न्यायालय की ओर से बोलते हुए, न्यायमूर्ति वेंकटरामैया (जैसा कि उस समय वे थे) ने अवलोकित किया:—

> "यह सत्य है कि संहिता में ऐसा कोई स्पष्ट उपबंध नहीं है जो दंडाधिकारी को भरण-पोषण के आवेदन के लंबित रहने के दौरान अंतरिम भरण-पोषण के भुगतान का निर्देश देने हेतु आदेश पारित करने के लिए अधिकृत करता हो। संहिता ऐसे आदेश के पारित किए जाने पर स्पष्ट रूप से कोई निषेध भी नहीं लगाती है। प्रश्न यह है कि क्या ऐसी शक्ति को धारा 125 के अधीन कार्यवाहियों की प्रकृति तथा संहिता के अध्याय IX में निहित अन्य समरूप उपबंधों, जिसका शीर्षक 'पत्नी, संतान एवं माता-पिता के भरण-पोषण के आदेश' है, को दृष्टिगत रखते हुए दंडाधिकारी में निहित माना जा सकता है। संहिता की धारा 125 प्रथम श्रेणी के दंडाधिकारी को यह शक्ति प्रदान करती है कि वह ऐसे व्यक्ति, जिसके पास पर्याप्त साधन हैं, किन्तु जो (i) अपनी पत्नी, जो स्वयं का भरण-पोषण करने में असमर्थ है, या (ii) अपने वैध अथवा अवैध अवयस्क संतान का, चाहे विवाहित हो या नहीं, जो स्वयं का भरण-पोषण करने में असमर्थ है, या (iii) अपने वैध अथवा अवैध संतान (जो विवाहित पुत्री न हो), जिसने वयस्कता प्राप्त कर ली है और जो किसी शारीरिक या मानसिक विकृति अथवा चोट के कारण स्वयं का भरण-पोषण करने में असमर्थ है, या (iv) अपने पिता या माता का, जो स्वयं का भरण-पोषण करने में असमर्थ हैं, भरण-पोषण करने में उपेक्षा करता है या इंकार करता है, ऐसी उपेक्षा या इंकार के प्रमाण पर, उसे अपनी पत्नी अथवा ऐसे संतान, पिता या माता को, जैसा कि प्रकरण हो, प्रति

माह ऐसी राशि, जो कुल मिलाकर पाँच सौ रुपये से अधिक न हो, जैसा कि दंडाधिकारी उचित समझे, भरण-पोषण के रूप में भुगतान करने का आदेश दे सकता है। ऐसी भत्ता राशि आदेश की तिथि से देय होगी अथवा यदि ऐसा आदेशित किया जाए तो भरण-पोषण के आवेदन की तिथि से देय होगी।"

24. संहिता के प्रासंगिक प्रावधानों की व्याख्या करते हुए, भरण-पोषण देने के दायित्व पर बल देते हुए तथा 'सामाजिक न्याय' के सिद्धांत को लागू करते हुए, माननीय न्यायाधीश ने कहा:

"उपरोक्त के आलोक में, यह न्यायालय का कर्तव्य है कि वह संहिता के अध्याय IX के प्रावधानों की ऐसी व्याख्या करे जिससे उन पर किया गया निर्माण विधि के मूल उद्देश्य को विफल न करे। किसी स्पष्ट निषेध के अभाव में, यह उचित है कि अध्याय IX के प्रावधानों को इस प्रकार समझा जाए कि वे दंडाधिकारी को निहित रूप से यह शक्ति प्रदान करते हैं कि वह धारा 125 के अंतर्गत दायर आवेदन के लंबित रहने के दौरान आवेदक को भरण-पोषण के रूप में कुछ युक्तियुक्त राशि देने का निर्देश दे सके। यह सामान्य बात है कि धारा 125 के अंतर्गत दायर आवेदन के अंतिम निस्तारण में कई महीने लग जाते हैं। अतः उस कार्यवाही का लाभ उठाने के लिए आवश्यक है कि आवेदक अंतिम आदेश की तिथि तक जीवित रहे, और यह वह अनेक मामलों में तभी कर सकता है जब न्यायालय अंतरिम भरण-पोषण के भुगतान का आदेश पारित करे। प्रत्येक न्यायालय को यह माना जाता है कि उसके पास आवश्यक आशय से ऐसी सभी शक्तियाँ होती हैं जो उसके आदेशों को प्रभावी बनाने के लिए आवश्यक हैं। यह सिद्धांत लैटिन उक्ति *"जब किसी वस्तु या*

अधिकार को प्रदान किया जाता है, तो उसके साथ वह सब भी प्रदान किया जाता है जिसके बिना वह वस्तु स्वयं अस्तित्व में नहीं रह सकती" में निहित है(देखें: अर्ल जोविट का इंग्लिश लॉ का शब्दकोश 1959 संस्करण, पृष्ठ 1797),जब विधि द्वारा किसी कार्य का किया जाना अपेक्षित हो और यह पाया जाए कि उस कार्य को किए बिना कोई अन्य सहायक कार्य (जो स्पष्ट रूप से अधिकृत नहीं है) किए बिना वह संभव नहीं है, तो उस सहायक कार्य को आवश्यक आशय से स्वीकार किया जाएगा। यद्यपि ऐसी व्याख्या प्रत्येक मामले में स्वीकार्य नहीं हो सकती, तथापि वर्तमान मामले में यह संबंधित विधि के उद्देश्य को आगे बढ़ाती है। इसके विपरीत दृष्टिकोण से आवेदक को गंभीर कठिनाई हो सकती है, क्योंकि अंतिम आदेश पारित होने तक उसके पास जीवन-निर्वाह का कोई साधन न हो सकता है।"यह आशंका करने का कोई आधार नहीं है कि ऐसी निहित शक्ति की मान्यता से बड़ी संख्या में ऐसे मामलों में अंतरिम आदेश पारित किए जाने लगेंगे, जहाँ भरण-पोषण देने की वास्तविक देयता अस्तित्व में न हो। यह संभव है कि ऐसी स्थिति कुछ मामलों में उत्पन्न हो, किन्तु इससे उस व्यक्ति को होने वाली हानि, जिसके विरुद्ध ऐसा आदेश पारित किया गया है, अत्यंत न्यूनतम होगी, क्योंकि दोनों पक्षों को सुनने के पश्चात उसे शीघ्र ही ठीक किया जा सकता है। दंडाधिकारी, तथापि, यह अपेक्षा कर सकता है कि संबंधित आवेदक द्वारा या उसकी ओर से एक शपथपत्र प्रस्तुत किया जाए, जिसमें अंतरिम भरण-पोषण के दावे के समर्थन में आधार बताए गए हों, ताकि वह यह संतुष्ट हो सके कि ऐसा आदेश पारित करने हेतु प्रथम दृष्टया मामला बनता है। उचित मामलों में ऐसा आदेश, आवेदन की सूचना की सेवा से

पूर्व, *एकपक्षीय* रूप से भी पारित किया जा सकता है, जो कि प्रतिवादी को सुनने के पश्चात संशोधित या निरस्त भी किया जा सकता है। यदि दीवानी न्यायालय शपथपत्रों के आधार पर ऐसे अंतरिम आदेश पारित कर सकते हैं, तो ऐसा कोई कारण नहीं है कि दंडाधिकारी उन पर भरोसा न करे और अंतरिम भरण-पोषण के भुगतान के संबंध में निर्देश न दे। शपथपत्र को आवेदक के मामले के प्रथम दृष्टया प्रमाण के रूप में माना जा सकता है। यदि आवेदन या शपथपत्र में किए गए कथन सत्य नहीं हैं, तो जिसके विरुद्ध ऐसा आदेश पारित किया गया है, उसके लिए यह सदैव खुला है कि वह यह प्रदर्शित करे कि आदेश संधारणीय नहीं है। *संहिता की धारा 125 के अंतर्गत दंडाधिकारी द्वारा प्रयुक्त अधिकार-क्षेत्र की प्रकृति को ध्यान में रखते हुए, हमारा मत है कि उक्त प्रावधान की ऐसी व्याख्या की जानी चाहिए जिससे यह माना जाए कि दंडाधिकारी को आवश्यक आशय द्वारा यह शक्ति प्राप्त है कि वह उसके समक्ष प्रस्तुत आवेदन के लंबित रहने तक, उसमें उल्लिखित अन्य शर्तों के अधीन, संबंधित व्यक्ति को अंतरिम भरण-पोषण के रूप में युक्तियुक्त राशि देने का आदेश दे सके।"* (जोर दिया गया)

25. संसद ने इस विधि के उद्देश्य, इस न्यायालय द्वारा सावित्री मामले में दिए गए निर्णय तथा इस तथ्य पर विचार किया कि यद्यपि यह उपाय संक्षिप्त प्रकृति का है, फिर भी जो आवेदक स्वयं का भरण-पोषण करने में असमर्थ है, उसे ऐसी राहत प्राप्त करने के लिए 'कई वर्षों' तक प्रतीक्षा करनी पड़ सकती है। अतः इसने प्रावधान में संशोधन कर दंडाधिकारी को अंतरिम भरण-पोषण प्रदान करने के लिए स्पष्ट रूप से अधिकृत किया।

26. विधेयक के उद्देश्य एवं कारण विवरण में कहा गया था:

"यह देखा गया है कि दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 की धारा 125 के

अंतर्गत न्यायालय में आवेदन दायर करने के पश्चात, आवेदक को न्यायालय से राहत प्राप्त करने के लिए कई वर्षों तक प्रतीक्षा करनी पड़ती है। अतः यह आवश्यक समझा गया कि उक्त संहिता में स्पष्ट प्रावधान किए जाएँ ताकि धारा 125 के अंतर्गत पीड़ित व्यक्ति को अंतरिम भरण-पोषण भत्ता प्रदान किया जा सके। इसी के अनुरूप यह प्रस्तावित किया गया कि कार्यवाही लंबित रहने के दौरान, दंडाधिकारी पीड़ित व्यक्ति को अंतरिम भरण-पोषण भत्ता तथा कार्यवाही के ऐसे व्यय, जिन्हें वह उचित समझे, भुगतान करने का आदेश दे सके। यह भी प्रस्तावित किया गया कि ऐसा आदेश सामान्यतः नोटिस की सेवा की तिथि से साठ दिनों के भीतर पारित किया जाए।"

27. सावित्री मामले में इस न्यायालय के निर्णय के आलोक में, हमारे मत में माननीय दंडाधिकारी द्वारा दिनांक 20 नवम्बर, 1998 के आदेश द्वारा अंतरिम भरण-पोषण प्रदान करना पूर्णतः सही और उचित था। हमें आदेश के उस भाग में कोई त्रुटि नहीं दिखाई देती और हम यह घोषित करते हैं कि धारा 125 के 2001 के संशोधन से पूर्व भी दंडाधिकारी द्वारा अंतरिम भरण-पोषण प्रदान किया जा सकता था।

28. जहाँ तक उस तिथि का प्रश्न है, जिस तिथि से उक्त राशि अपीलकर्ताओं को देय होगी, परिवार न्यायालय ने यह माना कि अपीलकर्ता भरण-पोषण प्राप्त करने के लिए आवेदन की तिथि अर्थात् 21 जुलाई, 1997 से ही हकदार होंगे।

29. परिवार न्यायालय ने कहा:

"*यह आदेश आवेदन की तिथि अर्थात् 21.07.1997 से प्रभावी होगा।* प्रतिवादी को निर्देशित किया जाता है कि वह इस आदेश की तिथि से तीन माह के भीतर बकाया राशि का भुगतान करे तथा प्रत्येक आगामी माह की 15 तारीख तक वर्तमान मासिक भरण-पोषण राशि का भुगतान

करता रहे।" *(जोर दिया गया)*

30. इस प्रकार, परिवार न्यायालय ने धारा 125 की उपधारा (2) के अंतर्गत प्रदत्त शक्ति का प्रयोग किया, जो न्यायालय को यह निर्धारित करने का अधिकार देती है कि आवेदक भरण-पोषण का हकदार आदेश की तिथि से होगा या आवेदन की तिथि से। परिवार न्यायालय ने भरण-पोषण का भुगतान आवेदन की तिथि से करने का आदेश दिया।

31. उच्च न्यायालय ने, तथापि, परिवार न्यायालय के आदेश के उस भाग को निरस्त कर दिया। अन्य बातों *के साथ-साथ* उसने निम्नलिखित कहा:

> "उपरोक्त पक्षकारों के तर्कों पर विचार करने पर यह न्यायालय पाता है कि अधीनस्थ न्यायालय ने वर्तमान मामले पर उचित ढंग से विचार नहीं किया और न ही दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 125 के प्रावधानों के उद्देश्य को ध्यान में रखा। जैसा कि अनेक निर्णयों में कहा गया है, उक्त प्रावधान का उद्देश्य भिक्षावृत्ति और दीनता को रोकना तथा मुख्यतः परित्यक्त पत्नी या अन्य आश्रितों को आर्थिक सहायता प्रदान करना है। यह कहना कि उसका अपना पुत्र संपत्ति पर कब्जा कर ले और वह चुपचाप बैठी रहे तथा इस संबंध में कोई कदम न उठाए—यह उचित नहीं है। वास्तव में, दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 125 के अंतर्गत ही पुत्र का यह कर्तव्य है कि वह अपने पिता और माता का भरण-पोषण करे, यदि वे स्वयं का भरण-पोषण करने में असमर्थ हों; जबकि न्यायालय ने इस तथ्य पर विचार ही नहीं किया। जब याचिकाकर्ता ने यह मुद्दा उठाया कि विपक्षी पक्ष को अपने वैवाहिक गाँव की भूमि और मकान से आय प्राप्त हो रही है, तो न्यायालय को उसे इस प्रकार अनदेखा नहीं करना चाहिए था, जैसा कि किया गया है। इससे प्रबल संदेह उत्पन्न होता है कि अधीनस्थ न्यायालय ने पहले ही यह मन बना लिया था कि वह

याचिकाकर्ता की ओर से कही गई प्रत्येक बात पर अविश्वास करेगा और विपक्षी पक्ष के कथनों पर विश्वास करेगा, जो कि साक्ष्य का मूल्यांकन करने का सही तरीका नहीं है। ऐसे मामलों में न्यायालय का कर्तव्य है कि वह तथ्यों की संभावनाओं पर विचार करे और उसके पश्चात वास्तविक स्थिति के संबंध में निष्पक्ष निष्कर्ष पर पहुँचे। विवादित आदेश से यह प्रतीत नहीं होता कि अधीनस्थ न्यायालय ने ऐसा कोई प्रयास किया है, बल्कि विपक्षी पक्ष संख्या 1 द्वारा किए गए महत्वपूर्ण स्वीकार को भी उसने दृष्टि से ओझल कर दिया है।

उपरोक्त दृष्टिकोण के परिप्रेक्ष्य में, यह न्यायालय नहीं पाता कि अधीनस्थ न्यायालय ने मामले के पहलुओं पर सही ढंग से विचार किया है। *अधीनस्थ न्यायालय ने यह भी विचार नहीं किया कि आवेदन की तिथि से, जो कि आदेश की तिथि से 9 वर्ष से अधिक पूर्व की है, भरण-पोषण देने का आदेश पारित करने का क्या औचित्य था। इस न्यायालय के निर्णयों के अनुसार, ऐसा आदेश तब आवश्यक हो सकता है जब पक्ष यह दर्शाए कि स्वयं का भरण-पोषण करने हेतु उसे धन की अत्यंत आवश्यकता थी और आवेदन लंबित रहने की अवधि में उसे ऋण लेना पड़ा। अभिलेख पर ऐसा कोई सामग्री उपलब्ध नहीं है।* बल्कि, विपक्षी पक्ष को नवम्बर, 1998 से ही दिनांक 20.11.1998 के आदेश द्वारा अंतरिम भरण-पोषण प्राप्त हो रहा था, यद्यपि वस्तुतः अंतरिम भरण-पोषण का प्रावधान पहली बार संशोधन अधिनियम, 2001 द्वारा दिनांक 24.09.2001 से लागू किया गया। हालाँकि, चूँकि उक्त आदेश चुनौती के अधीन नहीं है, इसलिए यह न्यायालय उस मुद्दे में आगे नहीं जाएगा। किसी भी स्थिति में, यह एक प्रासंगिक तथ्य है कि वर्ष 1998 से ही

विपक्षी पक्ष संख्या 1 एवं 2 को अंतरिम भरण-पोषण प्राप्त हो रहा था, जिसके माध्यम से उन्होंने उस अवधि में अपना निर्वाह किया। अतः आदेश की तिथि से 9 वर्ष पूर्व की आवेदन तिथि से भरण-पोषण भुगतान का आदेश पारित करने का कोई औचित्य नहीं है।"

(जोर दिया गया)

32. उपर्युक्त अवलोकनों से स्पष्ट है कि उच्च न्यायालय के अनुसार, आवेदन की तिथि से भरण-पोषण देने के आदेश के लिए न्यायालय के पास उचित औचित्य होना आवश्यक है, न कि केवल आदेश की तिथि से। चूँकि आवेदन की तिथि से भरण-पोषण प्रदान करने के लिए ऐसा कोई कारण विद्यमान नहीं था, अतः परिवार न्यायालय द्वारा ऐसा करना उचित नहीं था। इस सीमा तक परिवार न्यायालय का आदेश त्रुटिपूर्ण था और परिणामस्वरूप उसे निरस्त कर दिया गया तथा भरण-पोषण केवल परिवार न्यायालय के आदेश की तिथि से देने का निर्देश दिया गया।

33. अब तक इस प्रश्न पर इस न्यायालय का कोई प्रत्यक्ष निर्णय उपलब्ध नहीं है कि दंडाधिकारी पत्नी, बच्चों या माता-पिता को भरण-पोषण किस तिथि से देने का आदेश दे सकता है। तथापि, हम कुछ उच्च न्यायालयों के निर्णयों का संदर्भ ले सकते हैं।

34. ऐसा प्रतीत होता है कि इस प्रश्न पर मतभेद (मतों में विभाजन) है। एक मत के अनुसार, चूँकि धारा 125 की उपधारा (2) यह घोषित करती है कि भरण-पोषण "आदेश की तिथि से" देय होगा या "यदि ऐसा आदेश दिया जाए तो आवेदन की तिथि से", इसलिए सामान्य नियम यह है कि दंडाधिकारी को भरण-पोषण का भुगतान केवल आदेश की तिथि से करने का निर्देश देना चाहिए। यदि दंडाधिकारी इस *सामान्य नियम* से हटकर आदेश पारित करता है और भरण-पोषण आदेश की तिथि के स्थान पर आवेदन की तिथि से प्रदान करता है, तो उसे ऐसे आदेश के समर्थन में कारण दर्ज करना अनिवार्य होगा। [देखें: *मोहम्मद इनायतुल्लाह खान बनाम सलमा बानो*, 1983 जबलपुर लॉ जर्नल 55; *रमेश्वर*

बनाम रामिबाई, 1987 आपराधिक विधि जर्नल 1952 (मध्य प्रदेश); *लच्छमनी बनाम रामू*, (1983) 1 क्राइम्स 590 (मध्य प्रदेश); *कमरुद्दीन बनाम श्रीमती रशीदा*, (1992) 1 डब्ल्यूएलसी 305 (राजस्थान); *श्यामलाल बनाम मान्शा बाई*, 1998 आपराधिक विधि जर्नल 2704 (राजस्थान); *मोहम्मद इस्माइल बनाम बिलकीस बानो*, 1998 आपराधिक विधि जर्नल 2803 (इलाहाबाद); *निथा रंजन चक्रवर्ती बनाम श्रीमती कल्पना चक्रवर्ती*, 2002 आपराधिक विधि जर्नल 4768 (कलकत्ता); *समयदीन बनाम उत्तर प्रदेश राज्य एवं अन्य*, 2001 आपराधिक विधि जर्नल 2064 (इलाहाबाद)]।

35. उच्च न्यायालय ने अपने विवादित आदेश में *बिजय कापड़ी बनाम श्रीमती कनिष्ठा देवी एवं अन्य*, (2000) 2 पीएलजेआर 241 के निर्णय का भी उल्लेख किया, जिसमें यह कहा गया था कि आवेदन की तिथि से भरण-पोषण देने का आदेश तभी आवश्यक हो सकता है जब पक्ष यह प्रदर्शित करे कि स्वयं का भरण-पोषण करने हेतु उसे धन की 'अत्यंत आवश्यकता' थी और आवेदन लंबित रहने की अवधि में उसे ऋण लेना पड़ा था। ऐसा कोई सामग्री अभिलेख पर प्रस्तुत नहीं की गई थी। इसके विपरीत, आवेदकों को नवम्बर, 1998 से ही दंडाधिकारी द्वारा पारित आदेश के माध्यम से अंतरिम भरण-पोषण प्राप्त हो रहा था, जबकि अंतरिम भरण-पोषण का प्रावधान विधि में पहली बार संशोधन अधिनियम, 2001 द्वारा दिनांक 24 सितम्बर, 2001 से जोड़ा गया था।

36. *समयदीन* मामले में, इलाहाबाद उच्च न्यायालय ने यह अवलोकित किया कि यद्यपि ऐसे परिस्थितियों पर विस्तृत चर्चा न भी हो, जिनके आधार पर न्यायालय आवेदन की तिथि से भरण-पोषण देने की अनुमति देता है, फिर भी धारा 125 की उपधारा (2) की भाषा के प्रकाश में कोई अन्य निष्कर्ष स्वीकार्य नहीं है।न्यायालय ने उदाहरण स्वरूप कुछ परिस्थितियों पर विचार किया, जैसे—कार्यवाही के निस्तारण में पति द्वारा अपनाई गई टालमटोल, पत्नी के प्रति की गई अत्यधिक क्रूरता , आदि। हालाँकि, विशेष परिस्थितियों के अभाव में भरण-पोषण आवेदन की तिथि से देने का आदेश नहीं दिया जा सकता।

37. कुछ अन्य उच्च न्यायालयों ने इसके विपरीत मत अपनाया है। उनके अनुसार, सामान्यतः भरण-पोषण आवेदन की तिथि से प्रदान किया जाना चाहिए, न कि आदेश की तिथि से। यदि दंडाधिकारी भरण-पोषण आदेश की तिथि से देने का निर्णय करता है और आवेदन की तिथि से नहीं देता, तो उसे ऐसा करने के लिए कारण दर्ज करने चाहिए।

38. *ज्ञानसेल्वी एवं अन्य बनाम इलावरासन,* (1999) 1 क्राइम्स 22 (मद्रास) में, मद्रास उच्च न्यायालय ने यह अवलोकित किया कि जब पत्नी स्वयं का भरण-पोषण करने में असमर्थ होने के आधार पर भरण-पोषण हेतु आवेदन करके न्यायालय का दरवाजा खटखटाती है, तो उसके लिए यह सिद्ध करना आवश्यक होता है कि वह आवेदन की तिथि से ही स्वयं का भरण-पोषण करने में असमर्थ थी। अतः जब न्यायालय जांच-पड़ताल के बाद यह निष्कर्ष निकालता है कि वह भरण-पोषण की अधिकारी है, तो यह निष्कर्ष अनिवार्यतः उस सामग्री पर आधारित होना चाहिए जिससे यह सिद्ध हो कि आवेदन दायर करते समय वह स्वयं का भरण-पोषण करने में असमर्थ थी। इसलिए, सामान्य नियम के रूप में दंडाधिकारी को आवेदन की तिथि से भरण-पोषण देने का आदेश पारित करना चाहिए। यह भी कहा गया कि यह उपाय त्वरित और संक्षिप्त प्रकृति का है, फिर भी व्यवहार में यह देखा जाता है कि पति विभिन्न आपत्तियाँ उठाकर कार्यवाही को आगे बढ़ने नहीं देता। न्यायालय को ऐसी सभी आपत्तियों का निस्तारण करना पड़ता है, जिससे समय लगता है। इसके अतिरिक्त, आदेश पारित होने के बाद भी पति उच्च न्यायालय में जाकर उसे चुनौती देता है और कभी-कभी अंतरिम आदेश भी प्राप्त कर लेता है, जिससे और विलंब होता है। इस पूरी प्रक्रिया में परित्यक्त पत्नी और बच्चे ही पीड़ित होते हैं, जो धारा 125 के अंतर्गत प्रदत्त संरक्षण का सहारा लेते हैं। यदि भरण-पोषण आवेदन की तिथि से प्रदान नहीं किया जाएगा, तो समाज के कमजोर वर्गों का न्याय-प्रणाली पर विश्वास कम हो जाएगा। न्यायालय ने *पी.एन. दुडा बनाम पी. शिव शंकर,* (1988) 3 एस.सी.सी. 167 में व्यक्त इस न्यायालय की गहरी चिंता का भी उल्लेख किया कि— "न्याय बहुत लंबे समय तक, अत्यधिक लंबे समय

तक, मौन में कराहता रहता है।"

39. *अमरजीत कौर बनाम सरताज़ सिंह,* 1996 क्रि.एल.जे. 4476 (पंजाब एवं हरियाणा) में, पंजाब एवं हरियाणा उच्च न्यायालय ने यह माना कि धारा 125 की उपधारा (2) दंडाधिकारी को आवेदन की तिथि से भरण-पोषण प्रदान करने के लिए कोई विशेष कारण दर्ज करने की अनिवार्यता नहीं लगाती है। इस उपधारा में केवल इतना कहा गया है कि यदि आदेश में यह उल्लेख नहीं है कि भरण-पोषण किस तिथि से देय होगा, तो वह आदेश की तिथि से देय होगा। किन्तु जहाँ भरण-पोषण आवेदन की तिथि से देना हो, वहाँ इस संबंध में न्यायालय द्वारा एक स्पष्ट आदेश आवश्यक है। विधिक प्रावधान में ऐसा कुछ भी नहीं है जिससे यह निष्कर्ष निकाला जा सके कि यदि दंडाधिकारी आवेदन की तिथि से भरण-पोषण देने का आदेश देता है, तो उसे इसके लिए विशेष कारण दर्ज करना अनिवार्य है।

40. *कृष्णा जैन बनाम धर्मराज जैन*, 1992 क्रि.एल.जे 1028 (मध्य प्रदेश) में, मध्य प्रदेश उच्च न्यायालय की खंडपीठ ने दंड प्रक्रिया संहिता की अन्य धाराओं के संदर्भ में धारा 125 की उपधारा (2) के क्षेत्र और दायरे पर विचार किया। इसने ऊपर उल्लिखित *मोहम्मद इनायतुल्लाह खान*, *रमेश्वर* तथा *लच्छमनी* के निर्णयों को निरस्त कर दिया और यह कहा कि धारा 125 की उपधारा (2) का साधारण पठन यह स्पष्ट करता है कि भरण-पोषण भत्ता आदेश की तिथि से या आवेदन की तिथि से—दोनों में से किसी भी तिथि से प्रदान किया जा सकता है।यह कहना कि सामान्यतः भरण-पोषण आदेश की तिथि से ही देय होना चाहिए और आवेदन की तिथि से तभी दिया जाए जब उसके समर्थन में कारण हों, उपधारा में ऐसा कुछ जोड़ने के समान होगा जिसकी विधायिका ने कभी कल्पना नहीं की थी। न्यायालय ने यह भी कहा कि वह उपधारा (2) में ऐसा कोई नियम नहीं पढ़ सकता जिससे यह निष्कर्ष निकले कि भरण-पोषण आदेश की तिथि से ही दिया जाना चाहिए या आवेदन की तिथि से दिया जाना केवल एक अपवाद है।

41. कारणों के अभिलेखन के संबंध में, खंडपीठ ने यह अवलोकित किया कि चाहे भरण-पोषण आदेश की तिथि से प्रदान किया जाए या आवेदन की तिथि से—दोनों ही स्थितियों में न्यायालय के लिए कारण दर्ज करना आवश्यक है। न्यायालय ने इस संदर्भ में दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 354 की उपधारा (6) का उल्लेख किया, जो इस प्रकार है:

> "(6) *धारा 117 या धारा 138 की उपधारा (2) के अंतर्गत प्रत्येक आदेश तथा धारा 125, धारा 145 या धारा 147 के अंतर्गत पारित प्रत्येक अंतिम आदेश में निर्धारण हेतु बिंदु या बिंदुओं का उल्लेख, उन पर लिया गया निर्णय तथा उस निर्णय के कारण सम्मिलित होंगे।"*
>
> *(जोर दिया गया)*

42. अतः यह अवलोकित किया गया कि दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 125 के अंतर्गत पारित प्रत्येक अंतिम आदेश [तथा धारा 354 की उपधारा (6) में उल्लिखित अन्य धाराओं के अंतर्गत पारित आदेश] में निर्धारण हेतु बिंदु, उन पर लिया गया निर्णय तथा उस निर्णय के कारण अवश्य सम्मिलित होने चाहिए।

43. हमारा ध्यान *के. शिवराम बनाम के. मंगलाम्बा एवं अन्य*, 1990 क्रि.एल.जे 1880 (आंध्र प्रदेश) के निर्णय की ओर भी आकर्षित किया गया। *के. शिवराम* मामले में, आंध्र प्रदेश उच्च न्यायालय के एकल न्यायाधीश ने पति की ओर से प्रस्तुत इस तर्क को अस्वीकार कर दिया कि भरण-पोषण केवल आदेश की तिथि से ही दिया जा सकता है और आवेदन की तिथि से भरण-पोषण केवल विशेष कारण दर्ज करके ही प्रदान किया जा सकता है। न्यायालय ने यह कहा कि संहिता के अंतर्गत न्यायालय को यह विवेकाधिकार प्रदान किया गया है कि वह मामले की परिस्थितियों के अनुसार भरण-पोषण या तो आदेश की तिथि से या याचिका की तिथि से प्रदान कर सकता है। न्यायालय ने यह भी उल्लेख किया कि जहाँ-जहाँ संसद ने किसी विशेष आदेश को पारित करते समय विशेष कारण दर्ज करना आवश्यक समझा है, वहाँ-वहाँ इसके लिए स्पष्ट प्रावधान किया गया है [देखें: संहिता

की धारा 167 की उपधारा (3) (डिफॉल्ट जमानत), धारा 361 (परिवीक्षा देने से इंकार) आदि]।

44. हमारे विचार में, उच्च न्यायालय का यह कहना सही नहीं है कि *सामान्य नियम* के रूप में दंडाधिकारी को भरण-पोषण केवल आदेश की तिथि से ही देना चाहिए और आवेदन की तिथि से नहीं। और यदि वह आवेदन की तिथि से भरण-पोषण देने का आदेश पारित करना चाहता है, तो उसे इसके समर्थन में कारण दर्ज करना आवश्यक है। जैसा कि *के. शिवराम* मामले में कहा गया है, कारण दोनों ही स्थितियों में दर्ज किए जाने चाहिए। न्यायालय का यह अवलोकन भी सही है कि जहाँ-जहाँ संसद ने न्यायालय को विशेष कारण दर्ज करने का अभिप्राय रखा है, वहाँ-वहाँ उसने इसके लिए स्पष्ट प्रावधान किया है और न्यायालय को ऐसे कारण दर्ज करने की अपेक्षा की है।

45. इसके अतिरिक्त, मुकदमे की अवधि न तो आवेदक के नियंत्रण में होती है और न ही उसके हाथ में होती है, और भरण-पोषण का अधिकार मामले के निस्तारण की अनिश्चित तिथि पर निर्भर नहीं छोड़ा जाना चाहिए। इस कठोर वास्तविकता को ध्यान में रखते हुए, इस न्यायालय ने सावित्री मामले में यह कहा था कि 'अंतरिम' भरण-पोषण देने पर किसी निषेध के अभाव में, ऐसी शक्ति को संहिता की धारा 125 के उस कल्याणकारी प्रावधान में निहित माना जा सकता है, जो उस पत्नी को, जो स्वयं का भरण-पोषण करने में असमर्थ है, कार्यवाही के लंबित रहने के दौरान भरण-पोषण सुनिश्चित करता है। यहाँ तक कि संसद ने भी इस वास्तविकता को ध्यान में रखते हुए संशोधन अधिनियम, 2001 द्वारा इस उद्देश्य हेतु स्पष्ट प्रावधान कर दिया।

46. फिर, भरण-पोषण एक ऐसा अधिकार है जो पत्नी को विवाह के क्षण से ही अपने पति के विरुद्ध प्राप्त हो जाता है। यह केवल एक *नैतिक* दायित्व ही नहीं, बल्कि पति पर डाला गया एक विधिक कर्तव्य भी है कि वह अपनी पत्नी का भरण-पोषण करे। अतः जब भी कोई पत्नी अपने पति के साथ नहीं रहती और उससे भरण-पोषण की मांग करती है,

तो न्यायालय के समक्ष विचारणीय एकमात्र प्रश्न यह होता है कि क्या वह अपने पति से अलग रहने के लिए उचित थी और फिर भी उससे भरण-पोषण का दावा कर सकती है? यदि इसका उत्तर सकारात्मक में है, तो वह भरण-पोषण प्राप्त करने की अधिकारिणी है। इसलिए, दंडाधिकारी के लिए यह खुला है कि वह भरण-पोषण आवेदन की तिथि से प्रदान करे और ऐसा करने के लिए 'विशेष कारण' दर्ज करना आवश्यक नहीं है; यद्यपि उसे अपने द्वारा पारित आदेश के समर्थन में, संहिता की धारा 354 की उपधारा (6) के अनुसार कारण अवश्य दर्ज करने होंगे।

47. अतः हम यह घोषित करते हैं कि संहिता की धारा 125 के अंतर्गत आवेदन का निर्णय करते समय दंडाधिकारी के लिए यह आवश्यक है कि वह पत्नी, बच्चों या माता-पिता को भरण-पोषण देने या न देने के संबंध में कारण दर्ज करे। ऐसा भरण-पोषण आदेश की तिथि से दिया जा सकता है या, यदि ऐसा आदेशित किया जाए, तो आवेदन की तिथि से भी दिया जा सकता है। आवेदन की तिथि से भरण-पोषण प्रदान करने के लिए स्पष्ट आदेश आवश्यक है। किन्तु, इसके लिए न्यायालय द्वारा 'विशेष कारण' दर्ज करना आवश्यक नहीं है। हमारे मत में, धारा 125 की उपधारा (1) में, किसी स्पष्ट प्रावधान के अभाव में, ऐसी कोई आवश्यकता नहीं मानी जा सकती।

48. अंतिम प्रश्न भरण-पोषण की राशि से संबंधित है। परिवार न्यायालय ने अपीलकर्ता-पत्नी तथा पुत्री को क्रमशः ₹2000/- एवं ₹1000/- प्रति माह भरण-पोषण आवेदन की तिथि अर्थात् 21 जुलाई, 1997 से प्रदान किया। हमने धारा 125 के प्रासंगिक भाग को, जैसा कि वह मूल रूप में था तथा संशोधन अधिनियम, 2001 द्वारा संशोधित किया गया, पहले ही उद्धृत किया है। वर्ष 2001 के संशोधन से पूर्व भरण-पोषण की अधिकतम सीमा ₹500/- प्रति माह थी। अतः हमारे मत में, परिवार न्यायालय 21 जुलाई, 1997 (आवेदन की तिथि) से अपीलकर्ता संख्या 1 या अपीलकर्ता संख्या 2 को ₹500/- प्रति माह से अधिक भरण-पोषण प्रदान नहीं कर सकता था। अधिक से अधिक, ऐसा आदेश उस तिथि

से प्रभावी किया जा सकता था जिस दिन संशोधन अधिनियम, 2001 लागू हुआ। इस सीमा तक, परिवार न्यायालय द्वारा पारित आदेश विधि के अनुरूप नहीं था।

49. किन्तु, गुण-दोष के आधार पर भी परिवार न्यायालय द्वारा भरण-पोषण की राशि निर्धारित करना उचित नहीं था। प्रतिवादी के अधिवक्ता ने हमें पक्षकारों द्वारा प्रस्तुत साक्ष्यों की ओर ध्यान दिलाया। अभिलेख पर उपलब्ध सामग्री से यह स्पष्ट है कि अपीलकर्ता संख्या 1 (पत्नी) प्रतिवादी-पति के स्वामित्व वाले घर में रह रही है और इस तथ्य का उल्लेख स्वयं परिवार न्यायालय ने भी किया है। यह भी साक्ष्य में आया है कि वह अपने कब्जे में स्थित भूमि से आय प्राप्त कर रही थी, जो प्रतिवादी-पति की थी। यह सही है कि प्रतिवादी यह नहीं बता सका कि उस भूमि की खेती से पत्नी को वास्तविक रूप से कितनी आय प्राप्त होती थी, किन्तु भरण-पोषण की राशि निर्धारित करते समय यह भी एक प्रासंगिक और महत्वपूर्ण विचारणीय तत्व है। इसके अतिरिक्त, अपीलकर्ता संख्या 1 को अपने पिता से कुछ भूमि भी विरासत में प्राप्त हुई थी।

50. सभी तथ्यों एवं परिस्थितियों को ध्यान में रखते हुए, हमारे मत में न्याय के हित में यह उचित होगा कि दोनों अपीलकर्ताओं को प्रति माह ₹1000/- प्रत्येक के रूप में भरण-पोषण प्रदान किया जाए। जैसा कि पहले स्पष्ट किया जा चुका है, अपीलकर्ता उक्त भरण-पोषण राशि के लिए संशोधन अधिनियम, 2001 के लागू होने की तिथि अर्थात् 24 सितम्बर, 2001 से हकदार होंगे। जहाँ तक दंडाधिकारी द्वारा पारित 'अंतरिम' भरण-पोषण के आदेश का संबंध है, वह विधि के अनुरूप था और उसमें किसी प्रकार के हस्तक्षेप की आवश्यकता नहीं है।

51. उपर्युक्त कारणों के आधार पर, यह अपील आंशिक रूप से स्वीकार किए जाने योग्य है और तदनुसार ऊपर निर्दिष्ट सीमा तक स्वीकार की जाती है।

बी.बी.बी. अपील आंशिक रूप से स्वीकार की जाती है।

खंडन (डिस्क्लेमर)- स्थानीय भाषा में निर्णय के अनुवाद का आशय, पक्षकारों को इसे अपनी भाषा में समझने के उपयोग तक ही सीमित है और अन्य प्रयोजनार्थ इसका उपयोग नही किया जा सकता । समस्त व्यवहारिक, कार्यालयी, न्यायिक एवं सरकारी प्रयोजनार्थ, निर्णय का अंग्रेजी संस्करण ही प्रमाणिक होगा साथ ही निष्पादन तथा कार्यान्वयन के प्रयोजनार्थ अनुमान्य होगा।